द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद

षड्द्रव्य-पंचास्तिकाय अधिकार

कहे जीव अजीव जिन जिनवर वृषभ ने लोक में।
वे वंद्य सुरपति वृन्द मैं बंदन करूँ कर जोरकर।।१।।
जीव कर्त्ता भोक्ता अर अमूर्तिक उपयोगमय।
अर सिद्ध भवगत देहमित निजभाव से ही ऊर्ध्वगत।।२।।
जो सदा धारें श्वाँस इन्द्रिय आयु बल व्यवहार से।
वे जीव निश्चयजीव वे जिनके रहे नित चेतना।।३।।

(१)

उपयोग दो हैं ज्ञान-दर्शन चार दर्शन जानिये।
चक्षु अचक्षु अवधि केवल नाम से पहिचानिये।।४।।
ज्ञान आठ मतिश्रुतावधि ज्ञान भी कुज्ञान भी।
मनःपर्यय और केवल प्रत्यक्ष और परोक्ष भी।।५।।
सामान्यतः चऊ-आठ दर्शन-ज्ञान जिय लक्षण कहे।
व्यवहार से पर शुद्धनय से शुद्धदर्शन-ज्ञान हैं।।६।।
स्पर्श रस गंध वर्ण जिय में नहीं हैं परमार्थ से।
अतः जीव अमूर्त मूर्तिक बंध से व्यवहार से।।७।।
चिद्कर्मकर्त्ता नियत से द्रवकर्म का व्यवहार से।
शुधभाव का कर्त्ता कहा है आतमा परमार्थ से।।८।।

(२)

कर्मफल सुख-दुक्ख भोगे जीव नयव्यवहार से।
किन्तु चेतनभाव को भोगे सदा परमार्थ से।।९।।
समुद्घात विन तनमापमय संकोच से विस्तार से।
व्यवहार से यह जीव असंख्य प्रदेशमय परमार्थ से।।१०।।
भूजलानलवनस्पति अर वायु थावर जीव हैं।
दो इन्द्रियों से पाँच तक शंखादि सब त्रस जीव हैं।।११।।
पंचेन्द्रियी संज्ञी-असंज्ञी शेष सब असंज्ञि ही हैं।
एकेन्द्रियी हैं सूक्ष्म-बादर पर्याप्तकेतर सभी हैं।।१२।।
भवलीन जिय विध चतुर्दश गुणथान मार्गणथान से।
अशुद्धनय से कहे हैं पर शुद्धनय से शुद्ध हैं।।१३।।

(३)

उत्पादव्ययसंयुक्त अन्तिम देह से कुछ न्यून हैं।
लोकाग्रथित निष्कर्म शाश्वत अष्टगुणमय सिद्ध हैं।।१४।।
मूर्त पुद्गल किन्तु धर्माधर्मनभ अर काल भी।
मूर्तिक नहीं हैं तथापि ये सभी द्रव्य अजीव हैं।।१५।।
थूल सूक्षम बंध तम संस्थान आतप भेद अर।
उद्योत छाया शब्द पुद्गलद्रव्य के परिणाम हैं।।१६।।
स्वयं चलती मीन को जल निमित्त होता जिसतरह।
चलते हुए जिय-पुद्गलों को धरमदरव उसीतरह।।१७।।
छाया निमित्त ज्यों गमनपूर्वक स्वयं ठहरे पथिक को।
अधरम त्यों ठहरने में निमित्त पुद्गल-जीव को।।१८।।

(४)

आकाश वह जीवादि को अवकाश देने योग्य जो।
आकाश के दो भेद हैं जो लोक और अलोक हैं।।१९।।
काल धर्माधर्म जिय पुद्‌गल रहें जिस क्षेत्र में।
वह क्षेत्र ही बस लोक है अवशेष क्षेत्र अलोक है।।२०।।
परीवर्तनरूप परिणामादि लक्षित काल जो।
व्यवहार वह परमार्थ तो बस वर्तनामय जानिये।।२१।।
जानलो इस लोक के जो एक-एक प्रदेश पर।
रत्नराशिवत् जड़े वे असंख्य कालाणु दरव।।२२।।
इसतरह ये छह दरब जो जीव और अजीवमय।
कालबिन बाकी दरव ही पंच अस्तिकाय हैं।।२३।।

कायवत बहुप्रदेशी हैं इसलिए तो काय हैं।
अस्तित्वमय हैं इसलिए अस्ति कहा जिनदेव ने।।२४।।
हैं अनंत प्रदेश नभ जिय धर्म अधर्म असंख्य हैं।
सब पुद्‌गलों के त्रिविध एवं काल का बस एक है।।२५।।
यद्यपि पुद्‌गल अणु है मात्र एक प्रदेशमय।
पर बहुप्रदेशी कहें जिन स्कन्ध के उपचार से।।२६।।
एक अणु जितनी जगह घेरे प्रदेश कहें उसे।
किन्तु एक प्रदेश में ही अनेक परमाणु रहें।।२७।।

सप्ततत्त्व-नवपदार्थ अधिकार

बंध आस्रव पुण्य-पापरु मोक्ष संवर निर्जरा।
विशेष जीव अजीव के संक्षेप में उनको कहें।।२८।।
कर्म आना द्रव्य आस्रव जीव के जिस भाव से।
हो कर्म आस्रव भाव वे ही भाव आस्रव जानिये।।२९।।
मिथ्यात्व-अविरति पाँच-पाँचरु पंचदश परमाद हैं।
त्रय योग चार कषाय ये सब आस्रवों के भेद हैं।।३०।।
ज्ञानावरण आदिक करम के योग्य पुद्‌गल आगमन।
है द्रव्य आस्रव विविधविध जो कहा जिनवर देव ने।।३१।।

जिस भाव से हो कर्मबंधन भावबंध है भाव वह।
द्रवबंध बंधन प्रदेशों का आतमा अर कर्म के।।३२।।
बंध चार प्रकार प्रकृति प्रदेश थिति अनुभाग ये।
योग से प्रकृति प्रदेश अनुभाग थिती कषाय से।।३३।।
कर्म रुकना द्रव्यसंवर और उसके हेतु जो।
शुद्धातमा के भाव वे ही भावसंवर जानिये।।३४।।
व्रत समिति गुप्ती धर्म परिषहजय तथा अनुप्रेक्षा।
चारित्र भेद अनेक वे सब भावसंवररूप हैं।।३५।।
द्रवनिर्जरा है कर्म झरना और उसके हेतु जो।
तपरूप निर्मल भाव वे ही भावनिर्जर जानिये।।३६।।

भावमुक्ती कर्मक्षय के हेतु निर्मलभाव हैं।
अर द्रव्यमुक्ती कर्मरज से मुक्त होना जानिये।।३७।।
शुभाशुभपरिणामयुत जिय पुण-पाप सातावेदनी।
शुभ आयु नामरु गोत्र पुण अवशेष तो सब पाप हैं।।३८।।

मोक्षमार्ग अधिकार

सम्यग्दरशसद्ज्ञानचारित्र मुक्तिमग व्यवहार से।
इन तीन मय शुद्धातमा है मुक्तिमग परमार्थ से।।३९।।
आतमा से भिन्न द्रव्यों में रहें न रतनत्रय।
बस इसलिए ही रतनत्रयमय आतमा ही मुक्तिमग।।४०।।

जीवादि का श्रद्धान समकित जो कि आत्मस्वरूप है।
और दुरभिनिवेश विरहित ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।।४१।।
संशयविमोहविभरमविरहित स्वपर को जो जानता।
साकार सम्यग्ज्ञान है वह है अनेकप्रकार का।।४२।।
अर्थग्राहक निर्विकल्पक और है अविशेष जो।
सामान्य अवलोकन करे जो उसे दर्शन जानना।।४३।।
जिनवर कहें छद्मस्थ के हो ज्ञान दर्शनपूर्वक।
पर केवली के साथ हों दोनों सदा यह जानिये।।४४।।
अशुभ से विनिवृत्त हो व्रत समितिगुप्तिरूप में।
शुभभावमय हो प्रवृत्ती व्यवहार चारित्र जिन कहें।।४५।।

बाह्य अंतर क्रिया के अवरोध से जो भाव हों।
संसारनाशक भाव वे परमार्थ चारित्र जानिये।।४६।।
अरे दोनों मुक्तिमग बस ध्यान में ही प्राप्त हो।
इसलिए चित्तप्रसन्न से नित करो ध्यानाभ्यास तुम।।४७।।
यदि कामना है निर्विकल्पक ध्यान में हो चित्त थिर।
तो मोह-राग-द्वेष इष्टानिष्ट में तुम ना करो।।४८।।
परमेष्ठीवाचक एक दो छह चार सोलह पाँच अर।
पैंतीस अक्षर जपो नित अर अन्य गुरु उपदेश से।।४९।।
नाशकर चऊ घाति दर्शन ज्ञान सुख अर वीर्यमय।
शुभदेहथित अरिहंत जिन का नित्यप्रति चिन्तन करो।।५०।।

लोकाग्रथित निर्देह लोकालोक ज्ञायक आतमा।
अठकर्मनाशक सिद्धप्रभु का ध्यान तुम नित ही करो।।५१।।
ज्ञान-दर्शन-वीर्य-तप एवं चरित्राचार में।
जो जोड़ते हैं स्वपर को ध्यावो उन्हीं आचार्य को।।५२।।
रतनत्रय युत नित निरत जो धर्म के उपदेश में।
सब साधुजन में श्रेष्ठ श्री उवझाय को वंदन करें।।५३।।
जो ज्ञान-दर्शनपूर्वक चारित्र की आराधना।
कर मोक्षमारग में खड़े उन साधुओं को हो नमन।।५४।।
निजध्येय में एकत्व निष्पृहवृत्ति धारक साधुजन।
चिन्तन करें जिस किसी का भी सभी निश्चय ध्यान है।।५५।।

बोलो नहीं सोचो नहीं अर चेष्टा भी मत करो।
उत्कृष्टतम यह ध्यान है निज आतमा में रत रहो।।५६।।
व्रती तपसी श्रुताभ्यासी ध्यान में हों धुरंन्धर।
निजध्यान करने के लिए तुम करो इनकी साधना।।५७।।
अल्प श्रुतधर नेमिचंद मुनि द्रव्यसंग्रह संग्रही।
अब दोषविरहित पूर्णश्रुतधर साधु संशोधन करें।।५८।।

ईसवी सन् दो सहस दो अर चतुर्दश दिसम्बर।
को द्रव्यसंग्रह शास्त्र का पूरण हुआ अनुवाद यह।।